ग्लोबल वार्मिंग के वैश्विक प्रभाव

डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव,

एसोसिएट प्रोफेसर–हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,
डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ (उ.प्र.)

वाशिंगटन के वर्ल्ड वाच इंस्टीट्यूट के अनुसार मोटर गाड़ियों और कल कारखानों से निकलने वाली गैसों से ग्रीन हाउस प्रभाव पड़ रहा है जिससे पृथ्वी के दोनों ध्रुवों और पर्वत मालाओं पर बिछी हिम चादर तेजी से पिघलने लगी है। एक पर्यावरणीय सर्वेक्षण की मानें तो हिमचादर की मोटाई साठ के दशक के मुकाबले 40 फीसदी कम हो चुकी है। पृथ्वी की कुल बर्फ का 91 प्रतिशत हिस्सा अपने पास रखने वाला अंटार्कटिक हिम क्षेत्र पिछले पांच सालों में 3000 वर्ग किलोमीटर सिकुड़ गया है। ध्रुवों से दूर महासागरों में तैरते विराट हिमखण्ड पतले होकर टूट रहे हैं। 1972 के बाद से वेनेजुएला स्थित छह हिम नदियों में 4 का गायब हो जाना कोई मामूली घटना नहीं है। हमें वैश्विक स्तर पर तापमान की इस वृद्धि से सचेत रहने की आवश्यकता है।

अमेरिका के वैज्ञानिकों ने अपने लेखों के जरिए ग्लोबल वार्मिंग से भविष्य में मलेरिया के फैलने त्वचारोगों के बढ़ने तथा ग्रीन हाउस गैसों के अत्यधिक प्रभाव से ओजोन परत को भारी नुकसान होने की भविष्यवाणी की है। हाल ही में सैन फ्रांसिस्को से जुड़े वैज्ञानिकों ने स्पष्ट कहा भी है कि ग्लोबल वार्मिंग के चलते पिछले सौ सालों में समुद्री जल का स्तर 4 इंच से बढ़कर 8 इंच तक पहुँच गया है। उन वैज्ञानिकों ने इसके लिए जलवायु परिवर्तन और ग्रीन हाउस गैसों से होने वाली वैश्विक ताप वृद्धि को ही जिम्मेदार बताया है। अब यह स्पष्ट हो चला है कि सुनामी, कैटरीना, रीटा जैसी घटनाएं मात्र प्राकृतिक ही न होकर, प्रकृति से छेडछाड़ का नतीजा भी हैं। आज भारत के ही नहीं बल्कि विश्व के मौसम विज्ञानी भी जलवायु के इस तेजी से बदलते तेवर के प्रति चितिंत हैं।

पिछले दिनों संयुक्तराष्ट्र विकास कार्यक्रम की प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट में ओजोन परत में क्षरण होने के लिए औद्योगिक देशों को ही दोषी ठहराया था। निश्चित ही अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, ब्रिटेन व स्कैंडेनेवियाई देशों में पिछले दो–तीन दशक में त्वचा कैंसर के मामलों में 25 से 30 फीसदी की वृद्धि इसी वैश्विक ताप के लगातार बढ़ने का ही परिणाम रही है। इस वैश्विक तापवृद्धि के लिए प्रमुख रूप से वायुमंडल में लगातार कार्बन डाई आक्साइड का बढ़ना भी कम जिम्मेदार नहीं है। असल में वायुमंण्डल में कार्वन डाई आक्साइड और आक्सीजन का एक निश्चित अनुपात रहता है परन्तु इस अनुपात के गड़बड़ाने से मानव और वनपस्तियाँ, दोनों ही प्रभावित होती हैं। एक ओर जहाँ बड़ती आबादी के लिए खाद्यान्न में बृद्धि जरूरी है वहीं दूसरी और सीमित भूमि में पैदावार बढ़ाने के लिए अत्यधिक उर्वरकों के प्रयोग से भारी मात्रा में कार्वन डाई आक्साइड उत्सर्जित होती है। तरह–2 की लकड़ियों से निकलने वाले धुऐं, विद्युत तापघरों में कोयले के जलने तथा पेट्रोलियम पदार्थों के प्रयोग से लगभग 5 अरब टन जीवाश्म के जलने से हानिकारक गैसें वायुमण्डल में पहुँच रही हैं। इन गैसों में कार्वन डाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड, डाई फ्लोरो कार्बन, ओजोन तथा क्लोरो–फ्लोरो कार्बन

की मात्रा में अधिकता के कारण पृथ्वी के वैश्विक ताप में वृद्धि हो रही है। तथ्य बताते हैं कि क्लोरीन, फ्लोरीन तथा कार्बन परमाणुओं के तालमेल से बना क्लोरो'–फ्लोरो कार्बन का एक अणु कार्बन डाई आक्साइड के अणु की तुलना में 14 हजार गुना अधिक गर्मी पैदा करता है और धरती के तापमान को 25 फीसदी से भी अधिक बढ़ा देता है।

ओईसीडी के एक अन्य आकलन के अनुसार विश्व के 25 प्रतिशत कार्बन उर्त्सजन का कारण वैश्विक परिवहन है। इसका 66 प्रतिशत उत्सर्जन विकसित देशों में होता है। जब तक दोहा वार्ता किसी निष्कर्ष पर पहुंचेगी तब तक परिवहन के कारण वैश्विक ताप में बेहिसाब वृद्धि हो चुकी होगी। हम जानते हैं कि हवाई जहाज द्वारा एक टन माल ले जाने में पानी के जहाज के मुकाबले 49 गुना अधिक ऊर्जा की जरूरत पड़ती है और बोइंग 747 के दो मिनट के टेक आफ में इतनी ऊर्जा लगती है जितनी घास काटने वाली 24 लाख मशीनों को 20 मिनट चलाने में लगती है। अकेले अमेरिका में किसी भी वक्त आसमान में औसतन सात हजार हवाई जहाज उड़ान भरते रहते हैं। आने वाले दिनों में इनकी संख्या और बढ़ेगी। जलवायु परिवर्तन के लिए उत्सर्जन मानकों से भी अधिक महत्वपूर्ण वैश्विक व्यापार पर अकुंश लगाना है। हमें उत्सर्जन घटाने की तर्ज पर ही वैश्विक व्यापार कम करने का तंत्र विकसित करना होगा।[1]

यूएनईपी के अनुसार पूरी दुनिया में कार्बन का सालाना उत्सर्जन 44 अरब टन से ज्यादा नहीं होना चाहिए जो इस समय 47 अरब टन है। अब तक की स्वैच्छिक कटौती की घोषणा जो कि आवश्यक स्तर से दो अरब टन कम है। जाहिर हैं कि पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन, गरीबी, बेरोजगारी एवं अशिक्षा में तेजी से वृद्धि हो रही है। प्रकृति से छेड़छाड़ बढ़ती जा रही है। अनियंत्रित जनसंख्या होने से पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। जिससे जल वायु ध्वनि एवं औद्योगिक ही नहीं वरन रासायनिक उर्वरकों के अति प्रयोग के कारण मानव जीवन को खतरा उत्पन्न हो गया है। परिणामस्वरूप प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने से पर्यावरण की समस्या विकराल होती जा रही है।

जीवन जल में ही पैदा हुआ, फला फूला। नदियों के किनारे अनेक सभ्यताएं बनती बिगड़ती रहीं। सभ्यता के उत्कर्ष की ओर बढ़ रहे समाज ने प्रकृति के नियमों को तोड़ना शुरू कर दिया। नतीजा कभी हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की शक्ल में आया तो कभी अरब के रेगिस्तान की शक्ल में। आज वह ग्लोबल वार्मिंग के रूप में सामने आ रहा है। कितने अचरज की बात है। कि आज खाड़ी के अधिकाशं देशों में पेट्रोल सस्ता और पानी मंहगा है। आज पानी की समस्या विकराल रूप धारण करती जा रही है। कहते हैं कि अगला विश्व युद्ध पानी के लिए लड़ा जायेगा। यह नौबत इस तथ्य के बाबजूद सामने खड़ी है। कि धरती का तीन चौथाई हिस्सा पानी से घिरा है। कितनी विडंबना है कि गंगा और गोदावरी का देश भारत भी प्यासा है। भारत का कोई ऐसा अंचल नहीं है जहाँ पेयजल की समस्या न हो। महाराष्ट्र के विदर्भ में लगातार दो साल से अकाल पड़ने से अधिकतर जल स्त्रोत सूख गए हैं।

तापमान वृद्धि के कारण जलवायु में बहु–आयामी परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं। इसकी वजह से एक ओर तो विश्व के जल भण्डार उत्तरी ध्रुव और हिमालय के ग्लेशियर तेजी से पिघलने लगे हैं; वहीं दूसरी ओर कुछ क्षेत्रों मे वर्फ की कमी एवं सूखे की बढ़ती प्रवृति, तो अन्य में भारी वर्षा की प्रवृत्ति देखी जा रही है। हिन्दुओं की आस्था का केन्द्र तथा हिमालय का दूसरा सबसे बड़ा ग्लेशियर गंगोत्री आज से 200 वर्ष पूर्व की तुलना में अब तीन गुना अधिक

तेजी से पिघलता जा रहा है।उत्तरी ध्रुवीय एवं हिमालयी ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने से अब समुद्र में पूर्व की तुलना में अधिक मात्रा में पानी आ रहा है और उसका स्तर बढ़ता जा रहा है। सन् 1963 से 2003 की अवधि में समुद्र के स्तर में वृद्धि की दर 1.8 मि.मी. प्रतिवर्ष रही है। केवल हिमालय ग्लेशियरों के पिघलने से 21 वीं शताब्दी में समुद्र स्तर में 18 से 59 से0मी0 की वृद्धि का अनुमान है।

खनन, भवन निर्माण परिवहन व्यवस्था आदि ऐसे क्षेत्र हैं, जो सीधे–सीधे ग्लोबल वार्मिंग में भूमिका निभाते हैं, लिहाजा ऐसे क्षेत्रों में विशेष सावधानी बरतने की जरूरत है। जैसे कि अवैध खनन पर पूरी तरह अंकुश लगे, खेती की जमीन को क्रंकीट के जंगल में बदल देना आसान न हो, निजी वाहनों की जगह सार्वजनिक परिवहन और साइकिल को प्रोत्साहित किया जाए आदि–आदि। इसी तरह भविष्य के जल संकट को देखते हुए पानी बचाने और वर्षा जल एकत्र करने की मुहिम भी राष्ट्रीय स्तर पर शुरू होनी चाहिए। तभी हम ग्लोबल वार्मिंग को पूरी तरह बेअसर कर पाएंगें।

संसार में जल का चिंतन चुनौती एवं चेतावनी की चर्चा है। सभ्यता के विकास के साथ–साथ चल रही है चिंता। किन्तु अब इक्कीसवीं सदी को बड़े जल संकट के लिए रेखांकित किया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के अनुसार विश्व की एक अरब तीस करोड़ जनसंख्या को समुचित पेयजल उपलब्ध नहीं है। एक आकलन एवं अनुमान के अनुसार सन् 2025 तक जल की वैश्विक मांग जल की उपलब्धता से 56 प्रतिशत अधिक होगी। भारत सहित सम्पूर्ण विश्व में जल संकट खतरनाक स्तर पर पहुँच रहा है। एक तरफ अंधाधुंध दोहन एवं दमन से भू–जल के भण्डार खत्म हो रहे हैं। तो वहीं दूसरी ओर ग्लेशियर तेजी से सिकुड़ रहे हैं। नदियों की धारायें पतली होकर सूखती जा रही हैं। ताल– तालाब बाबड़ी सरोवर जलराशियों और झीलें भी स्वयं को असहाय पा रही हैं उपलब्ध अन्तः जल प्रदूषण की जबरदस्त गिरफ्त में होता जा रहा है।

इस बात में कोई दो राय नहीं कि जल चक्र जीवन के सम्पूर्ण चक्र को प्रभावित करता है। जल भी जीवन के विस्थापन का अहम कारण बनता है जल की समस्या इतनी अधिक भयावह होती जा रही है कि लोग अपने पैतृक स्थानों से विस्थापन को मजबूर हैं। कई गाँव तो जल समस्या से इतने अधिक ग्रस्त हैं कि वहाँ रहने वाले युवक अविवाहित रहने को मजबूर हैं क्योंकि ऐसे जल विहीन गाँवों में कोई भी व्यक्ति अपनी लड़की को नहीं व्याहना चाहता है। वर्तमान में अब वक्त आ गया है कि दुर्लभ होते हुए जल को हम अपनी पहुंच में रखें तथा स्वयं को जल प्रयोग के प्रति संवेदनशील हों। विशाल जनसंख्या वाले हमारे देश में जल के इस जज्बे की दरकार ज्यादा है क्योंकि चुनौती गम्भीर है।

एक अनुमान के मुताबिक 2025 तक एक तिहाई देशों में रहने वाली विश्व की दो तिहाई आबादी पानी के गंभीर संकट से ग्रस्त नजर आयेगी। तथा वर्ष 2050 तक प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता में भारी कमी आएगी तब प्रति व्यक्ति वार्षिक जल उपलब्धता 1140 क्यूबिक मीटर रह जायेगी। जबकि 21वीं सदी की शुरूआत 2001 में यह उपलब्धता 1820 क्यूबिक मीटर थी।

संयुक्त राष्ट्र के एक प्रतिवेदन के अनुसार विश्व की कुल जनसंख्या में से 20 प्रतिशत जनसंख्या को भी जीवनदायी पेयजल जरूरत के मुताबिक उपलब्ध नहीं है। अनुमानित आकलन के अनुसार आगामी 30 वर्षों में विश्व की जनसंख्या में 70 प्रतिशत इजाफा होगा तब आबादी का बड़ा तबका जल से वंचित होकर छट पटायेगा। विश्व बैंक के अनुसार अखिल विश्व में पानी का दबाव बढ़ा है। किन्तु यह भी सत्य है कि विकासशील

राष्ट्रों को सूखे की मार ने ज्यादा प्रभावित किया है। माली, जार्डन, पाकिस्तान, बंगलादेश, दक्षिणी अफ्रीका मोरक्को आदि राष्ट्रों में स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। तथ्य यह है कि जल आपूर्ति मानसून पर निर्भर करती है किन्तु बढ़ती आबादी ने भी इस समस्या को और अधिक उकसाया है।

संयुक्त राष्ट्र आकलन के अनुसार दुनियाँ की प्रमुख नदियों में पानी की मात्रा घट रही है। चीन की यलो अफ्रीका की नील और उत्तरी अमेरिका की कोलराडो नदियाँ एक चौथाई वर्ष समुद्र तक नहीं पहुचतीं। भारत की गंगा यमुना आदि सदानीरा नदियाँ पहले ही सूख रही हैं। रिपोर्ट के मुताबिक पृथ्वी की प्राण ऊर्जा को पुनर्नवा शक्ति देने वाले प्राकृतिक घटक अव्यवस्थित हो गए हैं। भूगर्भ जल स्तर नीचे चला गया हैं। प्यासे मरने की स्थिति अतिशीघ्र आने वाली हैं। 12 प्रतिशत पक्षी 25 प्रतिशत स्तनपायी और एक तिहाई मेढ़क प्रजाति के प्राणी नष्ट प्राय हैं। वनस्पति जगत में भी यही स्थिति है दुनियाँ के अधिकांश बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सहायक हैं। वे प्राकृतिक संसाधन लूटती हैं। राज्य व्यवस्थाएं उन्हें सुविधा देती हैं। पृथ्वी परत दर परत घायल है। जल हिंसा का शिकार है। वायु और आकाश रासायनिक प्रदूषण से आहत हैं। जीव–जन्तु, वनस्पति रो रही हैं। शोषक कारपोरेट जगत, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मठाधीश और इस लूटपाट के सहायक राजनेता आनंदमग्न हैं। बाकी सब आहत हैं। असल में प्रकृति के अधिकतम शोषण से अधिकतर सुखोपभोग यूरोप के देशों की जीवन दृष्टि है। वन, पर्वत, नदियाँ, समुद्र, वनस्पतियां, वायु और जल उनके लिए उपभोक्ता माल हैं। मार्क्सवादी दृष्टि में मनुष्य आदिमकाल से ही प्रकृति से संघर्षरत है। प्रकृति शत्रु है। उससे संघर्ष जरूरी है।

पानी में अत्यधिक आर्सोनिक होने से उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल में अत्यंत खतरनाक स्थिति पैदा हो गई है। भारतीय स्टैंडर्ड ब्यूरो के मुताबिक पीने के पानी में आर्सेनिक की मात्रा प्रति लीटर 50 माइक्रोग्राम (विश्व स्वास्थ संगठन के मुताबित 10 माइक्रोग्राम प्रति लीटर) हो तो उसका संवन किया जा सकता है। लेकिन ज्यादा मात्रा जान लेवा साबित हो सकती है। आर्सेनिक जनिक रोगों खासकर कैंसर से मुक्त चार प्रदेशों में पिछले एक दशक के दौरान 200 से ज्यादा लोग असाध्य चर्म रोगों से पीड़ित हैं।यही कारण है कि 1800 करोड़ रूपये खर्च होने के बाद यह सामने आ रहा है कि यमुना गंदे नाले से भी बदतर स्थिति में पंहुच गई है और वह भी देश की राजधानी दिल्ली में।

ऐसा लगता है कि अब हमारे नीति–नियंताओं में वह इच्छाशक्ति ही शेष नहीं रही जिससे यह उम्मीद जगे कि देश की प्रमुख नदियों को साफ – सुथरा किया जा सकेगा। यह एक तथ्य है कि वर्ष 2010 तक यमुना को साफ–सुथरा बनाने के संकल्प का परित्याग किया जा चुका है। शासन की प्राथमिकता यमुना की साफ–सफाई में नहीं रह गई है, इसका एक प्रमाण इससे मिलता है कि उच्चतम न्यायालय इस नदी को साफ–सुथरा करने की समय सीमा तीन बार बढ़ा चुका है। जब देश की इन दो प्रमुख नदियों को प्रदूषण रहित बनाने के मामले में हर स्तर पर हीलाहवाली का परिचय दिया जा रहा है तब फिर यह अनुमान महज ही लगाया जा सकता है कि अन्य नदियों के प्रदूषण को दूर करने के मामले में क्या स्थिति होगी? इससे अधिक निराशा जनक और क्या होगा कि गंगा और यमुना जैसी नदियों के प्रदूषण को दूर करने के मामले में न्यायपालिका के आदेशों –निर्देशों पर भी सही तरह अमल नहीं हो पा रहा है। पता नहीं कब हमारे नीति–नियंता यह महसूस करेंगे कि नदियों के प्रदूषण पर न तो केवल चिंता जताने से कुछ हासिल होने वाला है और न ही उस तरह की कार्ययोजनाओं से जो गंगा और यमुना को साफ – सुथरा करने के नाम पर वर्षों से चलाई जा रही हैं? गंगा और यमुना समेत

अन्य अनेक नदियों का प्रदूषण तो तब दूर होगा जब उन बुनियादी कारणों का निदान किया जाएगा जो नदियों कों गंदे नालों में तब्दील कर रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- मौर्य एस0 डी0 (2006) : संसाधन एवं पर्यावरण, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- नेगी, पी0 एस0 (200) : पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेषन, मेरठ।
- डब्लू सी0वाल्टन (1970) : ग्राउण्ड वाटर रिसोर्स इवेल्यूषन, एम0पी0 ग्रोव हील, न्यूयार्क, पृष्ठ 664।
- सिंह डा0 काषीनाथ सिंह, डा0 जगदीष सिंह (1997): आर्थिक भूगोल के मूल तत्व।
- मिश्र,डा0 डी0 के (2004) : जनसंख्या, पर्यारण एवं विकास,ए0 पी0 एच0 पब्लिषिंग कार्पोरेषन, नई दिल्ली।
- सिंह, रवीन्द्र (2001) पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।